ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-1, No.-1, PP-190-195,YEAR-2013

भारत में समिति व्यवस्था का आरम्भिक विकास व वर्तमान स्वरूप

❑ डॉ0 सानन्द कुमार सिंह

भारत में ''समिति पद्धति' का प्रारम्भ सन् 1854 में होता है। लेजिस्लेटिव कांउसिल (1854–61) ने अपनी 20 मई 1854 की बैठक में अपने 'स्टैडिंग ऑडर' बनाने के लिए 4 सदस्यों की एक समिति नियुक्त की थी। सन् 1856 में एक प्रवर समिति भी नियुक्त की गई थी। इसी लेजिस्लेटिव कांउसिल में एक सम्पूर्ण सदन समिति नियुक्त करने की भी प्रथा थी, जो प्रवर समितियों द्वारा विचार किये जाने पर विधेयकों पर विचार करती थी। इस प्रकार की सम्पूर्ण सदन समिति 1 जुलाई 1854 को गठित की गई थी। उसके बाद कई बार सम्पूर्ण सदन समिति का गठन किया गया। सन् 1862–1920 में वित्तीय विवरण पर विचार करने के लिए लेजिस्लेटिव कांउसिल द्वारा सम्पूर्ण सदन समिति के गठन का उल्लेख गवर्न्मेंट ऑफ इंडिया डिस्पैच 1908 में मिलता है। सम्पूर्ण सदन समिति की ही तरह प्रवर समितियों की प्रथा भी पहले से थी। लेजिस्लेटिव कांउसिल (1851–61) में भी एक प्रवर समिति नियुक्त करने की प्रथा थी, जिसका कार्य कांउसिल के सदस्यों को बचे हुए कार्यों का वितरण करना था।

आधुनिक काल में भारत संसदीय समितियों की व्यवस्था सन् 1921 में मान्टेगो चेम्सफोर्ड सुधारों की योजना के अन्तर्गत, जो भारत सरकार के अधिनियम 1919 में दी गई थी, के परिणाम स्वरूप हुई थी, लेकिन उन दिनों की समितियों, केन्द्रीय विधान सभा की तरह सरकार के निर्णय तथा उसके हस्तक्षेप से स्वतंत्र नहीं थी। उन्हें कोई शक्तियाँ या विशेषाधिकार प्राप्त नहीं थे। वे अपनी प्रक्रिया स्वयं तय नहीं कर सकती थी और न ही वे अपने आंतरिक कार्यों के लिए स्वयं अपने नियम बना सकती थी। केन्द्रीय विधान सभा के स्थायी आदेशों में 3 समितियों की व्यवस्था की गई थी, वे थी–विधेयकों के संबंध में प्रवर समिति[1] स्थायी आदेशों के संशोधन के लिए प्रवर समिति[2] तथा विधेयकों के संबंध में याचिका समिति।[3]

इसके अतिरिक्त भारतीय विधानसभा नियमों में दो और समितियों के गठन की व्यवस्था की गई थी। वे थी– किसी विधेयक के संबंध में संयुक्त–समिति तथा लेखा–समिति।[4]

प्रवर समितियाँ विधेयकों पर विचार होते हुए किसी सदस्य के तद्देश्यक प्रस्ताव पारित किये जाने पर नियुक्त हुआ करती थी। जिस विभाग से संबंधित विधेयक होता था, उस विभाग का मंत्री, विधेयक प्रस्तुत करने वाला सदस्य एवं गर्वनर–जनरल की एक्जीक्यूटिव कांउसिल का विधि सदस्य (यदि वह एसेम्बली का सदस्य हो तो), प्रवर समिति के सदस्य नियुक्त किये जाते थे। समिति के अन्य सदस्यों के नाम प्रस्ताव में प्रस्तावित किये जाते थे। यदि विधि मंत्री, समितिका सदस्य होता था, तो उसे ही समिति का सभापति नियुक्त किया जाता था। सबंधित विभाग के मंत्री को सदस्य न होते हुए भी समिति की बैठक में आने का अधिकार होता था। समिति का कोई सदस्य विम्मति टिप्पणी भी दे सकता था। समिति की कार्यवाही गुप्त रहती थी तथा वह अपना प्रतिवेदन सभा के समक्ष प्रस्तुत करती थी।

जिन अवस्थाओं में प्रवर समिति की नियुक्त होती थी उन्हीं अवस्थाओं में संयुक्त प्रवर समिति में दो सदनों के सदस्य हुआ करते थे। इसका सभापति, समिति द्वारा चुना जाता था। इसकी बैठकों का स्थान तथा समय कांउसिल के अध्यक्ष द्वारा निश्चित किया जाता था।

सन् 1922 के नियमों में एक स्थायी आदेशों

एसो0 प्रोफेसर – राजनीति विज्ञान विभाग, सतीष चन्द्र कॉलेज, बलिया (उ0प्र0), भारत

के संशोधन के लिए प्रवर समिति का भी प्रावधान किया गया था। यह समिति सभा के स्थायी आदेशों पर विचार करने के संबंध में पारित प्रस्ताव के फलस्वरूप नियुक्त की जाती थी। अध्यक्ष इसका सभापति होता था। इस समिति में उपाध्यक्ष तथा सात अन्य सदस्य होते थे। सन् 1921 में लोकसभा में लोक–लेखा समिति की स्थापना की गई। इस समिति में 12 सदस्य थे, जिनमें से 8 केन्द्रीय विधानसभा के गैर सरकारी सदस्यों द्वारा चुने जाते थे। तीन सदस्यों का नाम निर्देशन गवर्नर–जनरल द्वारा किया जाता था तथा वित्त सदस्य इसका सभापति होता था, जिसे निर्णायक मत देने का भी अधिकार था। इस समिति का कार्यकाल 3 वर्ष था। विधानसभा के कार्यकाल के साथ इसका कार्यकाल भी समाप्त हो जाता था। सन् 1933 में भारतीय विधानसभा नियमों में संशोधन करके यह उपबंध किया गया कि जव विधानसभा का कार्यकाल तीन वर्ष की अवधि से अधिक कर दिया जाये, तो तीन वर्ष की इस अवधि की समाप्ति पर नयी समिति का गठन किया जाए, मानों एक नयी विधानसभा का प्रारम्भ हो गया हो।[5]

भारतीय विधानसभा नियमों के अन्तर्गत सन् 1921 में बनायी गयी समिति के कृत्य सपरिषद् गवर्नर–जनरल के विनियोग लेखों तथा तत्संबंधी लेखा–परीक्षा की जाँच तक ही सीमित थे।[6]

लोक–लेखा समिति की संवैधानिक स्थिति की परीक्षा सन् 1926 में करायी गयी, जिससे यह निष्कर्ष निकला कि समिति को इस बात का अधिकार है कि वह लेखा–परीक्षा तथा विनियोग संबंधी रिपोर्ट के खर्च, चाहे उसकी मंजूरी विधानसभा देती हो या नहीं या प्राप्तियों के संबंध में महालेखा–परीक्षक की रिपोर्ट पर विचार कर सकती है और उसके संबंध में अपनी राय दे सकती है। सन् 1931 में लोक–लेखा समिति की सिफारिश पर सैनिक लेखा समिति का पुनर्गठन किया गया, जिसके अनुसार उसका सभापति, वित्त सदस्य होता था। इस प्रकार गठित सैनिक लेखा समिति सन् 1947 तक कार्य करती रही।[7]

सन् 1953 में यह तय किया गया कि राज्य सभा के 7 सदस्य भी इस समिति में शामिल किये जाये, जिसके फलस्वरूप इस समिति की सदस्य संख्या 22 हो गयी। यह समिति प्रत्येक वर्ष गठित की जाती है।

इस अधिनियम के अन्तर्गत एक अन्य समिति की भी स्थापना की गई, जिसे याचिका समिति कहते है। इस समिति का प्रादुर्भाव उस समय हुआ, जब 15 सितम्बर, 1921 को उस समय की राज्य–परिषद में एक सदस्य ने संकल्प प्रस्तुत किया। उस संकल्प में कहा गया कि जनता की याचिकाओं के संबंध में एक समिति की नियुक्ति की जाए, जिसे साक्ष्य लेने की शक्ति प्रदान हो। इस विषय पर सरकार द्वारा नियुक्त एक समिति ने विचार किया। उस समिति ने इस बात को ठीक नहीं समझा कि विधानसभा को वे शक्तियाँ दी जाये, जिनका प्रस्ताव संकल्प में किया गया था, लेकिन उसने यह सिफारिश की कि सार्वजनिक कार्य के संबंध में विधानसभा को याचिका देने का अधिकार दिया जाना चाहिए।[8]

इस सिफारिश के अनुसार अध्यक्ष व्हाइट ने 20 फरवरी, 1924 को उस समिति का गठन किया।[9] सन् 1933 तक इस समिति का नाम 'जनता की याचिकाओं संबंधी समिति' था, उस वर्ष इसका नाम बदलकर 'याचिका समिति' कर दिया गया। प्रथम लोकसभा में यह समिति सर्वप्रथम 27 मई, 1952 को नियुक्त की गई थी।

भारतीय विधान मण्डल के सदस्यों के लिए निवास के स्थान और आवास पर विचार करने के लिए 14 सितम्बर, 1927 को विधानसभा में पास किए एक प्रस्ताव के अनुसार एक समिति की नियुक्ति की गई। इस समिति ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और सदस्यों को मकान बांटने का काम उस विभाग ने सम्भाल लिया, लेकिन नवम्बर, 1931 में 55 सदस्यों ने अपने हस्ताक्षर से एक अभ्यावेदन अध्यक्ष को दिया, जिसमें उनका ध्यान इस बात की ओर दिलाया गया था कि सदस्यों को रहने के लिए जो मकान दिए जाते है, वे अनुपर्युक्त और अपर्याप्त है। उस अभ्यावेदन के अनुसार अध्यक्ष ने दलों के नेताओं के परामर्श से 22 फरवरी, 1932 को एक आवास समिति को नाम निर्दिष्ट किया। उसके बाद से अध्यक्ष, समय–समय

पर इस समिति का गठन करता रहता है।

इसके बाद सन् 1947 तक 'समिति–पद्धति' में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं आया। इस काल (1922–47) में राजनीतिक वाद–विवाद पर अधिक ध्यान दिया जाता था। सदस्यों को इस बात की कोई चिन्ता नहीं रहती थी कि विधेयक समिति से पारित होता है, या एक ही सभा की समिति से।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, संसद के रचनात्मक ध्येय पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा और यह विचार किया जाने लगा कि संसद को किस प्रकार वास्तविक रूप में प्रभुत्व सम्पन्न संस्था बनाया जाए। स्वतंत्रता के बाद संविधान ने संसद को बहुत अधिक अधिकार प्रदान किए, अतएव स्वतंत्रता के पहले संसद–सदस्यों के विशेषाधिकारों या सरकारी आश्वासनों पर निगरानी रखने आदि का प्रश्न ही नहीं उठता था। संविधान के लागू होने के बाद केन्द्रीय विधान मण्डल की स्थिति बिल्कुल बदल गयी और समितियों की व्यवस्था में भी बहुत अधिक परिवर्तन आ गया, न केवल समितियों की संख्या बढ़ गयी, बल्कि उनकी शक्तियाँ एवं कार्य भी बढ़ा दिये गये। इन नवीन परिस्थितियों के परिणामस्वरूप कुछ नयी समितियों का विकास हुआ।

सन् 1950 से पहले लोक–लेखा समिति के अतिरिक्त संसद के सदस्यों की एक ही ऐसी संस्था थी, जो सरकारी वित्त पर नियंत्रण रखती थी, उसे स्थायी वित्त समिति कहते थे। इस समिति की स्थापना सन् 1921 में भारतीय संवैधानिक सुधार 1918 संबंधी रिपोर्ट में की गयी सिफारिशों के अनुसार हुई थी। इन सिफारिशों का मुख्य उद्देश्य यह था कि केन्द्रीय विधानसभा के कुछ सदस्य ऐसे हो, जिनको खर्च संबंधी प्रस्थापनाओं की पूरी बातों का ज्ञान हो, जिनके लिए अनुदानों की मांगें विधान सभा में रखी जाती है और जिनकी मंजूरी विधानसभा द्वारा दी जाती है। स्थायी वित्त समिति, वित्त विभाग का परामर्श देने वाली संस्था के रूप में कार्य करती थी। पहली स्थायी समिति में 10 सदस्य थे, जिनका चुनाव विधानसभा ने किया था। इस समिति का सभापति वित्त सदस्य था, जिसे गवर्नर–जनरल के नाम निर्दिष्ट किया था। समिति के सदस्यों की संख्या सन् 1922 में 15 कर दी गयी, जिसमें सभापति भी सम्मलित थे। सन् 1949 तक समिति की संरचना में और कोई परिवर्तन नहीं हुआ। 23 नवम्बर, 1949 को संविधान सभा (विधायनी) द्वारा पास किए गए एक प्रस्ताव के अनुसार मुख्य सचेतक को पदेन–समिति का सदस्य नाम–निर्दिष्ट किया गया। 5 अप्रेल, 1950 को अन्तःकालीन संसद ने एक प्रस्ताव पास किया, जिसके अनुसार समिति के निर्वाचित सदस्यों की संख्या बढ़ाकर 16 कर दी गयी। मार्च, 1951 में राज्य वित्त मंत्री को समिति का अतिरिक्त पदेन सदस्य नियुक्त किया गया। समिति के इस प्रकार के गठन में सन् 1952 तक कोई परिवर्तन नहीं आया। सन् 1952 में स्थायी वित्त–समिति तथा स्थायी परामर्शदात्री समितियों का अतिरिक्त समाप्त हो गया10 तथा प्राक्कलन–समिति का गठन सर्वप्रथम 10 अप्रेल 1950 को हुआ था।

अध्यक्ष मावलंकर का विचार था कि सभा की एक समिति होना आवश्यक है, जिसे यह काम सौंपा जाये कि वह सरकार के विधान संबंधी तथा अन्य कार्य के लिए समय नियत करे। 28 मार्च 1951 को अपने पत्र में उन्होंने सदन नेता को लिखा कि क्योंकि वित्तीय विषयों को छोड़कर अन्य कार्यों की विभिन्न मदों के संबंध में समिति नियुक्त करने के संबंध में समिति नियुक्त करने की स्थिति नाजुक हो जाती है और विशेषकर उस समय जब किसी समापन प्रस्ताव को स्वीकार करना पड़ता है। अध्यक्ष मावलंकर ब्रिटेन की उस प्रक्रिया को ठीक नहीं समझते थे, जिसके अनुसार समय नियतन प्रस्ताव लाया जाता है, उनका विचार था कि यह बड़ी जटिल प्रक्रिया होगी और इस प्रस्ताव पर बहुत समय लग जाया करेगा। अध्यक्ष ने कहा कि मैं इस बात को अधिक अच्छा समझता हूँ कि समय नियत करने का कर्त्तव्य सभा की एक संचालन समिति को सौंप दिया जायें। तद्नुसार ऐसी समिति बनाने के लिए नियम बनाये गये तथा सर्वप्रथम कार्य मंत्रणा का गठन 14 जुलाई 1952 को किया गया।[11]

भारत में सन् 1862 से विधान मण्डलों में गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों को विचाराधीन

करने का प्रावधान है और यह सिलसिला तब से चलता आ रहा है। सन् 1921–46 के काल में भी गैर सरकारी सदस्यों की ओर से ऐसे विधेयक जैसे कि हिन्दू लॉ तथा अन्य दूसरीर सामाजिक समस्याओं से संबंधित विधेयक प्रस्तुत किये गये थे, जो कि कानून में परिवर्तित हो गए।

13 मार्च 1953 को लोक सभा में यह सुझाव दिया गया कि गैर–सरकारी सदस्यों द्वारा जिन विध ेयकों की सूचना दी जाती है, उनकी जाँच करने के लिए गैर–सरकारी सदस्यों के विधेयकों संबंधी एक स्थायी समिति का गठन किया जाये।[12]

अध्यक्ष महोदय ने इस समिति के गठन के संबंध में प्रस्ताव नियम–समिति के पास भेजा, जिसे नियम समिति ने पास कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप गैर–सरकारी सदस्यों के विधेयकों तथा संकल्पों संबंधी समिति पहली बार 1 दिसम्बर 1953 को बनायी गयी।[13]

विशेषाधिकार समिति का गठन लोक सभा में सर्वप्रथम 1 अप्रेल 1950 को किया गया था, तब से यह समिति प्रतिवर्ष मई माह में नियुक्त की जाती है।[14]

प्रत्यायुक्त/अधीनस्थ विधान समिति की स्थापना 1 दिसम्बर 1953 को हुई थी। 1 अप्रेल 1950 को डॉ. अम्बेडकर (तत्कालीन न्याय मंत्री) ने कुछ कानूनों को खण्ड 'सी' के राज्यों में लागू किये जाने के लिए प्रस्तावित विधेयक पर भाषण देते हुए कहा था, 'सम्भव है कि आगे सदन को यह सुझाव दूं जैसा कि 'हाउस ऑफ कामन्स' में अभी हाल में हुआ है, लोकसभा की एक स्थायी समिति नियुक्त करें, तो अधीनस्थ विधान की परीक्षा को और संसद को यह सूचित करें कि अधीनस्थ विधान ने संसद के मूल इरादों को अतिक्रमण किया है या उसने मूल सिद्धान्तों में कोई गड़गड़ पैदा की है या नहीं। इस मामलें पर स्वतंत्र रूप विचार करना चाहिए। इस कथन पर अध्यक्ष महोदय ने 25 जून, 1950 को डॉ. अम्बेडकर को एक पत्र लिखा, जिसके साथ उक्त विषय पर एक ज्ञापन भी था।[15]

ऐसी समिति के निर्माण के लिए नियम बनाये और 30 अप्रेल 1951 को नियमों में सम्मलित किये गये, जिसके फलस्वरूप इस समिति का सर्वप्रथम गठन 1 दिसम्बर 1953 को किया गया।

आश्वासन समिति की स्थापना अध्यक्ष द्वारा 1 दिसम्बर को की गई थी। इस प्रकार की समिति विश्व की अन्य संसदों में नहीं पाई जाती है, इसलिए इसे 'लोक सभा का आविष्कार' कहा गया है।[16]

संविधान के अनुच्छेद 118(1) में कहा गया है कि संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए प्रत्येक सदन अपने प्रक्रिया तथा कार्य–संचालन संबंधी नियम बनायेगा, इसलिए इस अनुच्छेद के पालनार्थ 1 अप्रेल 1950 को समाध्यक्ष ने नियम समिति की पहली बार स्थापना की थी।[17]

सन् 1954 तक प्रक्रिया एवं कार्य–संचालन के नियमों में और कार्यवाही के संचालन में जो भी परिवर्तन होते थे वे अध्यक्ष के द्वारा नियम समिति की सिफारिशों पर होते थे, लेकिन अन्त में नियम समिति ने यह तय किया कि नियमों में परिवर्तन करने से पहले, समिति की सिफारिशों को सदन द्वारा मंजूर करवाना चाहिए, यह नया परिवर्तन 15 अक्टूबर 1954 से लागू हुआ।

सामान्य प्रयोजन समिति की नियुक्ति सबसे पहली बार अध्यक्ष ने 26 नवम्बर 1854 को ही थी। इसका उद्देश्य यह था कि अध्यक्ष सभा में विभिन्न दलों तथा समूहों के प्रतिनिधियों को उन विभिन्न दिशाओं के संबंध में अपने विश्वास में ले सके और उनसे परामर्श कर सके, जिससे कि सभा के कार्य को सुधारा जा सके और अधिक उचित ढ़ंग से संगठित किया जा सकता है, जिससे कि ऐसे विषय उनके पूरे समर्थन के साथ आगे चल सके। इसका मतलब यह है कि लगभग सारी सभा के सहयोग से सारा काम चल सके।[18]

संसद के पुस्तकालय की स्थापना सन् 1921 में हुई थी और यह दोनों सदनों की आवश्यकताओं को पूरा करता था। अध्यक्ष ने पुस्तकालय से संबंधित परामर्श के लिए एक पुस्तकालय समिति का गठन 21 नवम्बर 1950 को किया, जिसे पुस्तकालय समिति कहते है। एक अर्थ में यह समिति संसद के सदस्यों और पुस्तकालय के बीच सम्पर्क का काम करती है।[19]

सदस्यों के वेतन तथा भत्तों संबंधी संयुक्त समिति भारतीय संसदीय–समितियों की एक मात्र ऐसी समिति है, जिसका गठन किसी अधिनियम 1954 की धारा 9 के अनुसार इस समिति की स्थापना 16 सितम्बर, 1954 को हुई थी। लोक सभा की प्रक्रिया नियमों अधि ानियम के द्वारा हुआ है। संसद सदस्य वेतन और भत्ता में एक समिति का कोई उल्लेख नहीं है, अतएव समिति ने अपनी आंतरिक कार्यवाही के नियम स्वयं बनाए हैं।[20]

सन् 1954 में लोक सभा ने संविधान के अनुच्छेद 102(1) के अनुसार संसद सदस्यों के अनर्हता संबंधी विविध प्रश्नों पर विचार करने के लिए एक तदर्थ लाभ–पद समिति नियुक्त की थी। उस समिति ने अन्य सिफारिशों के साथ–साथ यह भी सिफारिश की थी कि एक स्थायी समिति नियुक्त की जाए, जो लाभ–पदों पर विचार कर सके। बाद में, संसद (अनर्हता–निवारण) विधेयक पर विचार करने के लिए, जो संयुक्त प्रवर–समिति गठित हुई थी, उस समिति ने भी यह सिफारिश की थी कि एक स्थायी समिति नियुक्त की जानी चाहिए, यद्यपि उक्त विधेयक के पारित होने पर बनने वाले अधिनियम में स्थायी संयुक्त–समिति के बनाने का प्रस्ताव लाने का प्रयत्न करेगी। इसी आश्वासन के अनुरूप द्वितीय लोक सभा के लिए 31 अगस्त 1959 को एक लाभ पदों संबंधी संयुक्त समिति की नियुक्ति की गई थी। तृतीय लोक सभा के लिए समिति जून 1962 में तथा चौथी लोक सभा के लिए 5 जून 1967 को नियुक्त की गई।

सरकारी उपक्रमों अर्थात (निगमों, स्वायत्त संस्थाओं व कम्पनियों) पर संसदीय नियंत्रण कई वर्षों से एक विवादास्पद विषय रहा है। इंग्लैण्ड में इस विषय पर विचार करने के लिए दो प्रवर समितियां नियुक्त हुई। अन्ततोगत्वा सन् 1955 में वहां है 'सिलेक्ट कमेटी ऑन नेशनलाइज्ड इस्डस्ट्रीज' की स्थापना हुई जैसे अन्य मामलों में भारतीय संसद ने संसदों की जननी हाउस ऑफ कामन्स की प्रथाएं अपनाई है, उसी प्रकार 'सरकारी उपक्रमों' पर संसदीय नियंत्रण के लिए भी बहुत वर्षों से संसद–सदस्यों व अन्य स्वतंत्र विचारकों की यह मांग थी कि इन उपक्रमों की जाँच के लिए संसदीय समिति नियुक्त की जाए। सरकारी उपक्रमों पर संसद का समुचित नियंत्रण रखने के प्रश्न पर पहली बार सन् 1953 मेंसभा में चर्चा की गई। जिसमं सुझाव दिया गया कि विभिन्न श्रेणियों के सरकारी निगमों, कम्पनियों तथा संस्थाओं के मामलों की जाँच करने के लिए एक अलग संसदीय समिति बनायी जाये।[21]

सन् 1956 में पुनः यह मांग की गयी कि सरकारी निगमों या स्वायत्त निकायों के संबंध में प्राक्कलन तथा लोक–लेखा समितियों के कृत्यों को संभालने के लिए एक अलग समिति बनायी जाये, जिसका कोई परिणाम नहीं निकला। 10 अप्रेल 1958 को प्रधानमंत्री ने संसद में कांग्रेस दल की एक उप–समिति की नियुक्ति की, जिसका काम यह था कि सरकार के निगमों तथा कम्पनियों से संबंधित समस्याओं पर विचार करें और इस पर सुझाव दे कि संसद उन कम्पनियों आदि के दिन प्रतिदिन के कार्य–कलाप पर मौटे तौर पर कैसे नियंत्रण कर सकती है। इस उप–समिति उपक्रमांक के लिए संसद की एक अलग समिति का गठन किया जाये। 24 नवम्बर 1961 को सरकारी उपक्रमों के उपक्रमों संबंधी एक संयुक्त समिति की नियुक्ति का फैसला किया। तब 1 मई 1964 से इस समिति का गठन किया गया।

भारतीय संसद के द्वितीय सदन राज्य सभा में भी कुछ समितियाँ गठित की जाती है – 22 मई 1952 को 4 प्रमुख समितियाँ गठित की गई, वे है– याचिका समिति, कार्य मंत्रणा समिति, नियम समिति तथा विशेषाधिकार समिति। एक अन्य समिति जो अधीनस्थ विधान समिति कहलाती है, 30 सितम्बर 1964 को गठित की गई।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. विधानसभा के स्थायी आदेश, स्थायी आदेश सं. 40.
2. तदैव, सं. 56.
3. तदैव सं. 80.
4. भारतीय विधान सभा, नियम (42), (51).

5. कौल एवं शकधर : संसदीय प्रणाली तथा व्यवहार, 1972, पृं. 801.
6. भारतीय विधानसभा, नियम 1921 के नियम 52 (1), (2).
7. कौल एवं शकधरः संसदीय प्रणाली तथा व्यवहार, 1972, पृ. 806.
8. जनता की याचिकाओं संबंधी समिति का प्रतिवेदन, 1922, क्र. 9—13.
9. वि.स.वा.वि., 20—2, 1924, पृ. 817.
10. कौल एवं शकधरः संसदीय प्रणाली तथा व्यवहार, 1972, पृ. 819.
11. कौल एवं शकधरः संसदीय प्रणाली तथा व्यवहार, 1972, पृ. 748.
12. सं.वा.वि. (11) 13.03.1953, पृ. 2030—33.
13. परांजये हरिगोपाल : भारतीय संसदीय समितियाँ, 1968, पृ. 103.
14. परांजये हरिगोपाल : संसदीय समिति प्रथा, 1968, पृ. 88.
15. तदैव, पृ. 96.
16. कौल एवं शकधरः संसदीय प्रणाली तथा व्यवहार, 1972, पृ. 852.
17. परांजये हरिगोपाल : ससंदीय समिति प्रथा, 1968, पृ. 101.
18. प्रथम लोक सभा की सामान्य प्रयोजन समिति का कार्यवृत्त, 26 नवम्बर 1954.
19. कौल एवं शकधरः संसदीय प्रणाली तथा व्यवहार, 1972, पृ. 878.
20. परांजये हरिगोपाल : संसदीय समिति प्रथा, 1968, पृ. 113.
21. कौल एवं शकधरः संसदीय प्रणाली तथा व्यवहार, 1972, पृ. 838.

*****